E-ISSN: 2706-8927
P-ISSN: 2706-8919
www.allstudyjournal.com
IJAAS 2023; 5(4): 50-53
Received: 05-03-2023
Accepted: 10-04-2023

गजेन्द्र कुमार यादव
शोधार्थी, बी.एन. मंडल विश्वविद्यालय, लालू नगर, मधेपुरा, बिहार, भारत

Corresponding Author:
गजेन्द्र कुमार यादव
शोधार्थी, बी.एन. मंडल विश्वविद्यालय, लालू नगर, मधेपुरा, बिहार, भारत

हड़प्पा कालीन पशुपालन व्यवस्था

गजेन्द्र कुमार यादव

DOI: https://doi.org/10.33545/27068919.2023.v5.i4a.1024

सारांश
आज से लगभग एक सौ वर्ष पूर्व यह माना जाता था कि भारतीय सभ्यता कोई प्राचीन सभ्यता नहीं है, परन्तु सिन्धु घाटी सभ्यता की खोज ने यह सिद्ध कर दिया है कि भारतीय सभ्यता बहुत प्राचीन और बहुत विकसित थी। सिन्धु सभ्यता का परिज्ञान एवं प्रकाश पुरातत्त्व की एक महत्त्वपूर्ण देन है। आज से लगभग 100 वर्ष पूर्व यह सभ्यता अतीत के खण्डहरों में दबी पड़ी थी। समय-समय पर होने वाले उत्खनन कार्यों ने इस सभ्यता के विविध अंगों को स्पष्ट कर दिया है। मगध साम्राज्य के उदय के पूर्व एक सुविकसित व समृद्ध सभ्यता का अस्तित्व भारत में कम से कम एक हजार वर्ष तक रहा था। यह एक दिलचस्प बात है कि हिन्दुस्तान की कहानी के इस ऊषा काल में हम उसे एक नन्हें बच्चे के रूप में नहीं देखते हैं, बल्कि इस वक्त भी वह अनेक प्रकार से समृद्धशाली है।

कूटशब्द: सिन्धु घाटी सभ्यता, हड़प्पा, पशुपालन व्यवस्था, भारत

प्रस्तावना
भारत की प्रथम प्राचीन सभ्यता, जिसके बारे में हमें कुछ निश्चित ज्ञान प्राप्त हुआ है, सिन्धु घाटी की सभ्यता के नाम से प्रसिद्ध है। इसे आर्य पूर्व नगरीय सभ्यता (Pre-Aryan Urban Civilization) भी कहा जाता है। इसे हड़प्पा सभ्यता और संस्कृति (Harappa Civilization and Culture) भी कहा जाता है। 1920 में सर्वप्रथम पंजाब के मोण्टगोमरी जिले के हड़प्पा नामक स्थान में दयाराम साहनी और माधोस्वरूप वत्स के नेतृत्व में उत्खनन कार्य आरम्भ हुआ। हड़प्पा से 400 मील की दूरी पर 1922-23 में कुछ पुरातत्त्ववेत्ताओं ने खुदाई में सिन्ध में एक और प्राचीन नगर का पता लगाया जिसे मोहनजोदड़ो कहते हैं। यह सिन्ध के लरकाना जिले में स्थित है। इन दोनों स्थानों 'मोहनजोदड़ो और हड़प्पा' के आधार पर ही इतिहासकारों ने सिन्धु घाटी की सभ्यता का चित्र प्रस्तुत किया है। ये दोनों स्थान अब पाकिस्तान में हैं, किन्तु यह सभ्यता एक बड़े भाग में फैली हुई है। हड़प्पा संस्कृति के अवशेष जम्मू (मण्डा), सिन्ध, बिलोचिस्तान, दिल्ली, हरियाणा (बनावली), उत्तर प्रदेश, राजस्थान और नर्मदा नदी की घाटी में मिले हैं। विश्व की आदिम सभ्यताएँ नदियों की घाटियों में विकसित हुई हैं और भारत में भी मानव सभ्यता के प्रथम ठोस अवशेष सिन्धु घाटी में ही मिले हैं। सिन्धु सभ्यता की सबसे बड़ी विशेषता इस बात में है कि विभिन्न स्थलों में इस सभ्यता की जो मौलिक सामग्री प्राप्त हुई है, वह बहुत कुछ समरूप है। सिन्धु नगरों की भवन-निर्माण विधि, नालियों की योजना, ईंटों, मृदभाण्डों, आयुध, मुद्राओं, नाप-तौल आदि में बहुत कुछ एकरूपता देखी जा सकती है। हड़प्पा और मोहनजोदड़ो के सन्दर्भ में तो यह एकरूपता अत्यन्त स्पष्ट है। इन दोनों नगरों की इमारतों की निर्माण प्रणाली, मृद्भाण्डों के आकार-प्रकार तथा अलंकरण में ऐसी भिन्नता नहीं है जिसके आधार पर यह कहा जा सके कि अमुक वस्तु मोहनजोदड़ो की है तथा अमुक वस्तु हड़प्पा की है।
सिन्धु सभ्यता पुरातत्त्व की एक महत्त्वपूर्ण देन है। 1922 से पूर्व प्राचीन भारत का इतिहास वैदिक आर्यों के इतिहास से प्रारम्भ किया जाता था क्योंकि सबसे प्राचीन भारतीय ग्रन्थ ऋग्वेद है और अन्त में 1922-23 में मोहनजोदड़ो तथा हड़प्पा की खुदाई से जो सिन्धु सभ्यता प्रकाश में आई उसने सिद्ध कर दिया कि आर्यों की सभ्यता अथवा वैदिक सभ्यता से भी पहले भारत में एक बहुत ही समृद्ध नगरीय सभ्यता विद्यमान थी जो विश्व की अन्य प्राचीन सभ्यताओं से कहीं अधिक उन्नत थी।

सिन्धु सभ्यता का काल– सिन्धु सभ्यता के काल के सम्बन्ध में इतिहासकारों में मतैक्य नहीं है। डॉ. राधाकुमुद मुकर्जी के अनुसार इस सभ्यता का प्रसार काल 3250 ई. पू. से 2750 ई. पू. तक का रहा होगा। डॉ. राजबली पाण्डेय ने इसे 4 हजार वर्ष ई. पू. की सभ्यता माना है। गार्डन चाइल्ड के अनुसार सिन्धु घाटी सभ्यता 4 हजार ई. पू. की अथवा मध्यकालीन नागरिक सभ्यता के समान हो सकती है। पुरातत्त्ववेत्ताओं का अनुमान है कि इस सभ्यता का प्रारम्भ 500 वर्ष ई. पू. हुआ होगा और इसका पिछला काल 2700 ई. पू. के लगभग रहा होगा। सर जॉन मार्शल के विचार में यह सभ्यता 4000 ई. पू. से 2500 ई. पू. के बीच विकसित हुई। जो विद्वान इस सभ्यता को मैसोपोटामिया तथा मिस्र की सभ्यताओं के समकालीन मानते हैं उनके विचार में इस सभ्यता का काल 3250 ई. पू. से 2750 ई. पू. रहा होगा।

सिन्धु सभ्यता का विस्तार– उत्खनन कार्यों से पता चला है कि मोहनजोदड़ो और हड़प्पा सभ्यता अथवा सिन्धु घाटी की सभ्यता एक बड़े भाग में फैली हुई थी। मोहनजोदड़ो और हड़प्पा का क्षेत्र पाकिस्तान में चले जाने के बाद भारत में उत्खनन कार्य में गति आई तथा कई स्थानों की खुदाई हुई जिससे इस सभ्यता के विस्तार पर प्रकाश पड़ा। 1925 में चन्दड़ो में, 1953 में अम्बाला जिले के रोपड़ में, 1958 में हिण्डन नदी के तट पर दिल्ली से 45 किलोमीटर दूर आलमगीरपुर में और 1963 में उत्तर प्रदेश के सहारनपुर जिले के अम्बाखेड़ी में सिन्धु सभ्यता के अनुरूप वस्तुएँ खुदाई में मिली हैं। रोपड़ में खुदाई 1953 से 1956 तक चली, छः संस्कृतियों के अवशेष मिले हैं। पहली सतह हड़प्पा सभ्यता के विकसित काल की है। दूसरी सतह में कुछ नए प्रकार के मृद्भाण्ड डॉ. राजवती पाण्डेय प्राचीन भारत मिले हैं। यहाँ के निवासी मकान बनाने में कंकड़, पत्थर तथा मिट्टी का प्रयोग करते थे। इनके आभूषण हड़प्पा के आभूषणों के अनुरूप है। हड़प्पा संस्कृति के अनेक विशिष्ट वर्तन मिले हैं, किन्तु इस संस्कृति के बर्तनों के कुछ प्रकार यहाँ नहीं मिलते और कुछ बर्तन ऐसे मिले हैं जिन पर नए प्रकार के डिजायन हैं। काँचली मिट्टी एवं अन्य प्रकार के आभूषण, ताम्र कुल्हाड़ी, चर्ट फलक हड़प्पा प्रकार के ही मिले है एक कब्रिस्तान भी मिला है। रोपड़ की खुदाइयों से यह बात स्पष्ट हो गई है कि सबसे प्राचीन सभ्यता हड़प्पा की थी।

पाकिस्तान इलाके वाले पंजाब के हड़प्पा में काँस्य युग की शहरी संस्कृति एक अग्रणी खोज थी। सन् 1853 में एक महान उत्खननकर्ता और खोजी ब्रिटिश इंजीनियर ए. कनिंघम का ध्यान एक हड़प्पा मुहर पर गई। हालाँकि मुहर पर एक बैल और छह अक्षर अंकित थे लेकिन वह इसके महत्व से अनभिज्ञ रहा। हड़प्पा स्थलों की क्षमता की पहचान बहुत बाद में सन् 1921 में की गई, जब भारतीय पुरातत्वविद् दया राम साहनी ने इसकी खुदाई शुरू की। उसी समय एक इतिहासकार आर. डी. बनर्जी ने सिन्ध में मुहनजोदड़ो स्थल की खुदाई की। दोनों ने मिलकर एक विकसित सभ्यता का सूचक माने जाने वाले मिट्टी के बर्तनों और अन्य प्राचीन वस्तुओं की खोज को सम्भव बनाया। सन् 1931 में मार्शल के सामान्य पर्यवेक्षण में बड़े पैमाने पर मुहनजो-दड़ो की खुदाई की गई। सन् 1938 में मेके ने उसी जगह की खुदाई की। सन् 1940 में वत्स ने हड़प्पा में खुदाई की। सन् 1946 में मोर्तिमेर व्हीलर ने हड़प्पा में खुदाई की। स्वतन्त्रता पूर्व और विभाजन पूर्व काल में की गई खुदाई ने हड़प्पा संस्कृति के विभिन्न स्थलों की प्राचीन वस्तुओं को प्रकाश में लाया जहाँ काँसे का इस्तेमाल किया गया था।

स्वातन्त्र्योत्तर काल में भारत और पाकिस्तान के पुरातत्वविदों ने हड़प्पा और इससे जुड़े स्थलों की खुदाई की। सूरज भान, एम.के. धावलीकर, जे.पी. जोशी, बी. बी. लाल, एस.आर. राव, बी.के. थापर, आर. एस. बिष्ट और अन्य ने गुजरात, हरियाणा और राजस्थान में काम किया।

पाकिस्तान में एफ. ए. खान ने मध्य सिन्धु घाटी में कोट दिजी की खुदाई की और हकरा और पूर्व हकरा संस्कृतियों की तरफ एम.आर. मुग़ल ने काफी ध्यान दिया। ए. एच. दानी ने पाकिस्तान के उत्तर-पश्चिमी सीमावर्ती प्रान्त में गान्धार की कब्रों की खुदाई की। अमेरिका, ब्रिटेन, फ्रांस और इटली के पुरातत्वविदों ने भी हड़प्पा सहित कई स्थानों पर काम किया।

अब हमारे पास हड़प्पा पर्याप्त समृद्ध सामग्री है हालाँकि उत्खनन और खोज अभी भी प्रगति पर है। सभी विद्वान हड़प्पा संस्कृति के शहरीकरण के रूप में विकसित होने पर एकमत हैं, लेकिन हकरा-घग्घर नदी के साथ पहचानी गई सरस्वती की भूमिका और इस संस्कृति के निर्माण करने वाले लोगों के बारे में अलग-अलग राय है। इस अध्याय में इस पर आगे चलकर विचार किया जाएगा।

सिन्धु या हड़प्पा संस्कृति ताम्र-पाषाण संस्कृतियों से पुरानी है। जिसका अवलोकन पहले ही हो चुका है लेकिन काँस्य का उपयोग करने वाली संस्कृति के रूप में यह बाद की तुलना में कहीं अधिक विकसित था। यह भारतीय उपमहाद्वीप के उत्तर-पश्चिमी भाग में विकसित हुआ। इसे हड़प्पा कहा जाता है, क्योंकि यह सभ्यता पहली बार सन् 1921 में पाकिस्तान के पंजाब प्रान्त में स्थित आधुनिक स्थल हड़प्पा में खोजी गई थी। सिन्ध के कई क्षेत्र पूर्व- हड़प्पा संस्कृति के मुख्य क्षेत्र बने। यह संस्कृति शहरी सभ्यता में विकसित और परिपक्व हुई, जिसका विकास सिन्ध और पंजाब में हुआ। इस परिपक्व हड़प्पा संस्कृति का मुख्य क्षेत्र सिन्ध और पंजाब में मुख्यतः सिन्धु घाटी में था। वहाँ से यह दक्षिण और पूर्व की ओर फैली। इस तरह हड़प्पा संस्कृति पंजाब, हरियाणा, सिन्ध, बलूचिस्तान, गुजरात, राजस्थान और पश्चिमी उत्तर प्रदेश के किनारे थी। यह उत्तर में शिवालिक से दक्षिण में अरब समुद्र तक और पश्चिम में बलूचिस्तान के मकरन तट से उत्तर-पूर्व में मेरठ तक फैला था। समुद्री किनारों ने एक त्रिभुज जैसे स्थान का गठन किया जो लगभग 12.966 लाख वर्ग किलोमीटर में फैला हुआ था। जो कि पाकिस्तान की तुलना में बड़ा क्षेत्र है और प्राचीन मिस्र और मेसोपोटामिया की तुलना में तो निश्चय ही बड़ा है। ई.पू. तीसरी और दूसरी सहस्राब्दि में दुनिया भर में कोई अन्य संस्कृति क्षेत्र हड़प्पा जितना व्यापक नहीं था।

पूरे उपमहाद्वीप में अभी तक लगभग 2800 हड़प्पा स्थलों की पहचान की गई है। वे हड़प्पा संस्कृति के शुरुआती चरण, विकसित अवस्था और अन्तिम चरणों से सम्बन्धित हैं। विकसित चरण के स्थलों में दो सबसे महत्वपूर्ण शहर थे। पंजाब में हड़प्पा और सिन्ध में मुहनजोदड़ो (जिसका शाब्दिक अर्थ है मुर्दों का टीला) दोनों पाकिस्तानी हिस्से में है। वे 483 किलोमीटर दूर स्थित सिन्धु से जुड़े हुए थे। सिन्ध में मुहनजोदड़ो से लगभग 130 किलोमीटर दूर एक तीसरा शहर चान्हु-दरो में और खम्भात की खाड़ी के सिरहाने गुजरात के लोथल में चौथा शहर है। पाँचवाँ शहर उत्तरी राजस्थान में कालीबंगा में है, जिसका मतलब है काली चूड़ियाँ। छठा शहर बनावली, हरियाणा के हिसार जिले में स्थित है। यहाँ कालीबंगा की तरह दो सांस्कृतिक चरण मिलते हैं, पूर्व- हड़प्पा और हड़प्पा। ये हड़प्पा काल की मिट्टी की ईंटों से बने चबूतरे, सड़कों और नालियों के अवशेषों से सम्बन्धित स्वरूप को दर्शाते हैं। हड़प्पा संस्कृति का विकसित और समृद्ध स्तर इन सभी छह स्थलों पर देखने को मिलता है। सुतकजेण्डर (sutkagendor) और सुरकोतड़ा (surkotada) के तटीय शहरों में भी इसके प्रमाण दिखते हैं। इन शहरों की पहचान गढ़ से होती है। बाद में हड़प्पा काल के संकेत गुजरात के काठियावाड़ प्रायद्वीप के रंगपुर और रोजड़ी में मिलते हैं। इसके अतिरिक्त गुजरात के कच्छ इलाके में बसे धौलावीरा में हड़प्पा दुर्ग और हड़प्पा संस्कृति के सभी तीन चरण दिखते हैं। ये चरण राखीगढ़ी में भी मिलते हैं जो हरियाणा के घग्घर में स्थित है और धौलावीरा से बहुत बड़ा है।

तुलनात्मक तौर पर धौलावीरा 50 हेक्टेयर में फैला है जबकि हड़प्पा 150 हेक्टेयर और राखीगढ़ी 250 हेक्टेयर में है। हालाँकि, सबसे बड़ा स्थल मुहनजो-दड़ो 500 हेक्टेयर में फैला है। प्राचीन समय में बाढ़ से इस शहर का एक बड़ा हिस्सा पूरी तरह नष्ट हो गया था।

शहर योजना और संरचनाएँ– हड़प्पा संस्कृति की पहचान शहर योजना व्यवस्था से की जाती है। हड़प्पा और मुहनजो- दड़ो दोनों की मुख्य पहचान गढ़ या टीले के रूप में थी। सम्भवतः यह शासक वर्ग के सदस्यों द्वारा कब्जा कर लिया गया था। प्रत्येक शहर में गढ़ के नीचे ईंट के घरों वाला एक निचले शहर हैं जो आम लोगों द्वारा बसाए गए थे। शहरों के इन आवासीय व्यवस्थाओं की विशेषता यह है कि वे एक खास संरचनात्मक प्रणाली का पालन करते हुए बनाए गए थे, जिसमें सड़कें एक दूसरे को समकोण पर काटती थीं। ढाँचे के मामले में मुहनजो-दड़ो, हड़प्पा से ज्यादा विकसित था। शहरों के स्मारक, शासक वर्ग द्वारा जुटाए गए संगठित श्रमिकों और कर-संचय सम्बन्धी क्षमता के प्रतीक हैं। ईंटों की विशाल निर्मिति आम लोगों पर शासकों की प्रतिष्ठा और प्रभाव स्थापित करने का एक साधन थी।

मुहनजो-दड़ो का सबसे महत्वपूर्ण सार्वजनिक स्थान महान स्नानागार है। जिसमें तालाब शामिल हैं जो गढ़ों के टीलों में स्थित हैं। यह ईंटों की खूबसूरत निर्मिति का बेहतरीन उदाहरण हैं। इसकी माप 11.887.01 मीटर और गहराई 2.43 मीटर है। तालाब की दोनों ओर से सतह पर चढ़ने की व्यवस्था थी और कपड़े बदलने के लिए किनारे में कमरे थे। स्नानागार की फर्श पकी ईंटों की बनी थी। बगल के कमरे में विशाल कुएँ से पानी खींचा जाता था और स्नानगार के कोने से नाली निकलती थी। ऐसा मानना है कि स्नानागार मुख्य रूप से धार्मिक स्नान के लिए था। जो भारत में किसी भी धार्मिक समारोह के लिए बहुत महत्वपूर्ण है। धौलावीरा में पाए जाने वाले बड़े तालाब की तुलना बड़े स्नानागार से की जा सकती है। धौलावीरा

तालाब का इस्तेमाल शायद उसी उद्देश्य के लिए किया गया था। जिसके लिए मुहनजोदड़ो के स्नानागार का उपयोग किया जाता था।

मुहनजो-दड़ो में सबसे बड़ा भवन 45.71 मीटर लम्बा और 15.23 मीटर चौड़ा एक अन्न-भण्डार है। हालाँकि हड़प्पा के गढ़ में हम छह भण्डार पाते हैं। ईंटों के चबूतरे की एक श्रृंखला ने दो पंक्तियों में छह भण्डारों का आधार बनाया। प्रत्येक भण्डार 15.23 x 6.09 मीटर का था और नदी के पास ही था। बारह इकाइयों की संयुक्त फर्श लगभग 838 वर्ग मीटर की थी। यह लगभग उतने ही क्षेत्र में थी, जितने में मुहनजो-दड़ो का विशालकाय अन्नागार है। हड़प्पा में अन्नागारों के दक्षिण में ईंटों के कामचलाऊ वृत्ताकार चबूतरों की श्रृंखला थी। यह स्पष्टतः अनाज तैयार करने के लिए थे क्योंकि गेहूँ और जौ फर्श की दरारों में पाए गए थे। हड़प्पा में दो कमरों की छावनी भी थीं, जिसमें सम्भवतः मजदूर रहते थे।

कालीबंगा के दक्षिणी हिस्से में भी ईंटों के चबूतरे हैं, जिसका इस्तेमाल अन्नागार के लिए हुआ होगा। अतः ऐसा लगता है कि हड़प्पा के शहरों में अन्नागारों ने एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

हड़प्पा शहरों में पकी ईंटों का इस्तेमाल बेजोड़ है। क्योंकि मिस्र की समकालीन इमारतों में मुख्यतः सूखी ईंटों का इस्तेमाल किया जाता था। हम समकालीन मेसोपोटामिया में पकी ईंटों का उपयोग पाते हैं लेकिन हड़प्पा के शहरों में इनका इस्तेमाल उससे कहीं अधिक हुआ।

मुहनजोदड़ो की जलनिकासी प्रणाली बहुत प्रभावशाली थी। लगभग सभी शहरों में हर घर चाहे वे बड़े हों या छोटे सब में अपना आँगन और स्नानागार होता था। कालीबंगा में कई घरों में अपने कुएँ थे। नाली से घरों का पानी सड़कों पर निकलता था। कभी-कभी इन नालियों को पत्थर के पाटों या ईंटों से ढक दिया जाता था। बनावली में भी सड़कों और नालियों के अवशेष पाए गए हैं। कुल मिलाकर घरेलू स्नानागार और नालियों की गुणवत्ता उल्लेखनीय है और हड़प्पा की जलनिकासी व्यवस्था अनूठी है। शायद ही किसी अन्य काँस्ययुगीन सभ्यता ने स्वास्थ्य और स्वच्छता पर इतना ध्यान दिया, जितना कि हड़प्पा। के लोगों ने दिया।

कृषि और अनाज– सिंधु प्रदेश में आज पहले की अपेक्षा बहुत ही कम वर्षा होती है, इसलिए यह प्रदेश अब उतना उपजाऊ नहीं रहा। यहाँ के समृद्ध देहातों और शहरों को देखने से प्रकट होता है कि प्राचीन काल में यह प्रदेश खूब उपजाऊ था। संप्रति यहाँ केवल 15 सेंटीमीटर वर्षा होती है। ईसा पूर्व चौथी सदी में सिकंदर का एक इतिहासकार बता गया है कि सिंध इस देश के उपजाऊ भागों में गिना जाता था। पूर्व काल में सिंधु प्रदेश में प्राकृतिक वनस्पति संपदा अधिक थी, जिसके कारण यहाँ अधिक वर्षा होती थी। यहाँ के वनों से ईंटें पकाने और इमारत बनाने के लिए लकड़ी बड़े पैमाने पर इस्तेमाल में लाई जाती थी। लंबे अरसे तक खेती का विस्तार, बड़े पैमाने पर चराई और ईंधन के लिए लकड़ी की खपत होते रहने से यहाँ की प्राकृतिक वनस्पति-संपदा क्षीण होती गई। इस प्रदेश की उर्वरता का एक विशेष कारण शायद सिंधु नदी से हर साल आने वाली बाढ़ थी। गाँव की रक्षा के लिए खड़ी की गई पकी ईंट की दीवारों से प्रकट होता है कि बाढ़ हर साल आती थी। सिंधु नदी मिस्र की नील नदी की अपेक्षा कहीं अधिक जलोढ़ मिट्टी बहाकर लाती थी और इसे बाढ़ वाले मैदानों में छोड़ जाती थी। जैसे नील ने मिस्र का निर्माण और वहाँ के लोगों का भरण-पोषण किया, वैसे ही सिंधु नदी ने सिंध क्षेत्र का निर्माण और वहाँ के लोगों का भरण-पोषण किया। सिंधु सभ्यता के लोग बाढ़ उतर जाने पर नवंबर के महीने में बाढ़ वाले मैदानों में बीज बो देते थे और अगली बाढ़ के आने से पहले अप्रैल महीने में गेहूँ और जौ की अपनी फसल काट लेते थे। यहाँ कोई फावड़ा या फाल तो नहीं मिला है, लेकिन कालीबंगां की प्राकहड़प्पा अवस्था में जो कँड (हलरेखा) देखे गए हैं उनसे अनुमान लगाया जाता है कि हड़प्पा काल में राजस्थान में हल जोते जाते थे। हड़प्पाई लोग शायद लकड़ी के हलों का प्रयोग करते थे। इस हल को आदमी खींचते थे या बैल, इस बात का पता नहीं है। फसल काटने के | लिए शायद पत्थर के हँसियों का प्रयोग होता था। गबरबंदों या नालों को बाँधों से घेरकर जलाशय बनाने की परिपाटी बलूचिस्तान और अफगानिस्तान के कुछ हिस्सों की विशेषता रही है, किंतु लगता है कि नहरों या नालों से सिंचाई की परिपाटी नहीं थी। हड़प्पाई गाँव, जो अधिकतर बाढ़ वाले मैदानों में थे, प्रचुर अन्न उपजा लेते थे, जो न केवल उनकी अपनी आवश्यकता की पूर्ति के लिए, बल्कि खेती के काम से मतलब न रखने वाले नगरनिवासी शिल्पियों, व्यापारियों और सामान्य नागरिकों की जरूरत पूरी करने के लिए भी पर्याप्त होता था।

सिंधु सभ्यता के लोग गेहूँ, जौ, राई, मटर आदि अनाज पैदा करते थे। वे दो किस्म का गेहूँ 'और जौ उगाते थे। बनावली में मिला जौ बढ़िया किस्म का है। इनके अलावा वे तिल और सरसों भी उपजाते थे। परंतु हड़प्पाकालीन लोथल में रहने वाले हड़प्पाइयों की स्थिति भिन्न रही है। लगता है कि लोथल के लोग 1800 ई. पू. में ही चावल उपजाते थे जिसका अवशेष वहाँ पाया गया है। मोहेंजोदड़ो और हड़प्पा में और शायद कालीबंगां में भी अनाज बड़े-बड़े कोठारों में जमा किया जाता था। संभवतः किसानों से राजस्व के रूप में अनाज लिया जाता था और वह पारिश्रमिक चुकाने और संकट की घड़ियों में काम के लिए कोठारों में जमा किया जाता था। यह बात हम मेसोपोटामिया के नगरों के दृष्टांत से कह सकते हैं जहाँ मज़दूरी में जौ दिया जाता था। सबसे पहले कपास पैदा करने का श्रेय सिंधु सभ्यता के लोगों को है। चूँकि कपास का उत्पादन सबसे पहले सिंधु क्षेत्र में ही हुआ, इसलिए यूनान के लोग इसे सिन्डन (Sindon) कहने लगे जो सिंधु शब्द से निकला है।

नवपाषाण बाशिन्दे सबसे प्राचीन कृषक समुदाय थे। वे पत्थर से बने फावड़े और खुदाई योग्य लकड़ियों से जमीन खोदते थे, जिसके सिरे पर आधे किलोग्राम के अंगूठीनुमा पत्थर लगे होते थे। पत्थर के चिकनाए उपकरण के अलावा, वे माइक्रोलिथ पत्ती का इस्तेमाल करते थे। वे मिट्टी और सरकण्डे की लकड़ी से बने वृत्ताकार या आयताकार घरों में रहते थे। माना जाता है कि वृत्ताकार घरों में रहने वाले आदिम लोगों की सम्पत्ति सार्वजानिक थी। हर परिस्थिति में, नवपाषाणयुगीन लोगों ने एक स्थिर जीवन को अपनाया और रागी, कुल्थी और चावल उपजाया। मेहरगढ़ के नवपाषाण लोग अधिक उन्नत थे। उन्होंने गेहूँ और जौ का उत्पादन किया, वे मिट्टी की ईंटों के घरों में रहते थे।

नवपाषाण चरण के दौरान, कई बस्तियाँ अनाज की खेती और पशुपालन से परिचित हुईं। इसलिए उन्हें अनाज संग्रह, खाना पकाने, खाने और पीने के लिए बर्तनों की आवश्यकता थी। इसलिए, प्रथमतः हस्तनिर्मित मिट्टी के बर्तनों के उपरान्त चाक निर्मित बर्तनों का निर्माण किया। बाद में नवपाषाण लोग बर्तन बनाने के लिए पैरों के पहिये का इस्तेमाल करते थे। ऐसा लगता है कि कुम्हार का चाक पश्चिमी एशिया से बलूचिस्तान आया और वहाँ से उपमहाद्वीप में फैल गया। नवपाषाण मिट्टी के बर्तनों में; काले पके हुए, धूसर और चिकने एवं चमकीले बर्तन शामिल थे।

पशुपालन– हालाँकि हड़प्पा के लोगों ने खेती भी की और बड़े पैमाने पर पशुपालन भी किया। बैल, भैंस, बकरियाँ, भेड़ और सूअरों का पालन किया गया। कूबर वाले ऊँट और बैलों को हड़प्पा के लोगों ने पसन्द किया। शुरू से ही कुत्ते और बिल्लियों के प्रमाण मिलते हैं। गधे एवं ऊँट भी पाले गए थे निश्चय ही इनका उपयोग बोझ उठाने और ऊँट को खेतों में जुताई के लिए भी इस्तेमाल किया जाता था। सतही तौर पर घोड़े का सबूत मुहनजो-दड़ो और लोथल के एक सन्दिग्ध टेराकोटा मूर्ति से मिलता है। एक घोड़े के अवशेष, पश्चिम गुजरात में स्थित सुरकोतडा से मिला है जो ई.पू. 2000 के आस-पास का है। लेकिन इसकी पहचान सन्दिग्ध है। किसी भी हाल में हड़प्पा संस्कृति घोड़ों पर केन्द्रित नहीं थी। प्रारम्भिक और विकसित हड़प्पा संस्कृतियों में न तो घोड़े की हड्डियाँ पाई गईं न ही इसके कोई अस्तित्व पाए गए। हड़प्पा के लोग हाथी से अच्छी तरह परिचित थे, वे गैण्डे से भी परिचित थे। मेसोपोटामिया के समकालीन रूप से अनाज का उत्पादन और जानवरों का पालन किया। लेकिन गुजरात के हड़प्पा के लोगों ने धान की खेती की और हाथी पाला, मेसोपोटामिया में ऐसा नहीं था।

हालाँकि पशुपालन एवं अनाज का उत्पादन करने वाले शुरुआती बाशिन्दे ई. पू. 5500 के आस-पास बाढ़ से बाधित हुए। किन्तु पत्थरों और हड्डियों के औजारों की मदद से ई.पू. 5000 के आस-पास कृषि एवं अन्य गतिविधियाँ फिर से शुरू

हुई। इस क्षेत्र के नवपाषाण युगीन लोग शुरू से ही गेहूँ और जौ का उत्पादन करते थे। वे प्रारम्भ में ढोर-डंगर, भेड़ और बकरियाँ पालते थे। शुरू में बकरी पालन की प्रधानता थी लेकिन अन्ततः दो अन्य जानवरों के कारण पशुपालन पहले की तुलना में बढ़ गया। सम्भवतः पशुपालन से कृषि में भी मदद मिली। अनाज का उत्पादन पर्याप्त मात्रा में बढ़ा, फलस्वरूप भण्डारण भी शुरू हुआ।

निष्कर्ष

हड़प्पा नगरों की खुदाई में पालतू जानवरों की प्रजातियाँ पाई गई हैं। भारतीय कूबड़ वाले मवेशी (बोस इंडिकस) का सबसे अधिक बार सामना किया गया था, हालांकि क्या एक कूबड़ रहित किस्म के साथ, जैसे कि मुहरों पर दिखाया गया है, स्पष्ट रूप से स्थापित नहीं है। भैंस (बी. बुबलिस) कम आम है और जंगली हो सकती है। भेड़ और बकरियां होती हैं, जैसा कि भारतीय सुअर (सुस क्रिस्टेटस) करता है। ऊंट मौजूद है, साथ ही गधा (इक्वस असिनस)। घरेलू मुर्गे की हड्डियाँ असामान्य नहीं हैं; इन पक्षियों को स्वदेशी जंगल फाउल से पालतू बनाया गया था। अंत में, बिल्ली और कुत्ता दोनों स्पष्ट रूप से पालतू थे। वर्तमान में, लेकिन जरूरी नहीं कि एक पालतू प्रजाति के रूप में, हाथी है। घोड़ा संभवतः मौजूद है लेकिन अत्यंत दुर्लभ और जाहिर तौर पर केवल हड़प्पा काल के अंतिम चरणों में मौजूद है।

संदर्भ

1. डॉ. विमलचन्द्र पाण्डेय प्राचीन भारत का राजनीतिक तथा सांस्कृतिक इतिहास, पृ०. 58.
2. निरंजन कुमार झाः पितृनाम पं. श्री शशिकान्त झाः ग्रामः पत्रालयश्च-वनसारा, पचाढी थाना-केवटी मण्डलम् दरभंगा (बिहार)
3. डॉ० वी०एस० भार्गव, प्राचीन भारतीय इतिहास, रिसर्च पब्लिकेशन, जयपुर, पृ०– 26
4. वही, पृ०– 27
5. डॉ० सोहन राज तातेड, यूरोप की धूरी एवं मित्र राष्ट्रो का इतिहास, प्रथम संस्करण- 2015, पृ०- 13-14
6. डॉ० विजय सागर सिंह, भारतीय इतिहास, सं०- 1997, पृ०- 27-28
7. मजूमदार राय चौधुरी दत्त, भारत का वृहत इतिहास, 2002, पृ०- 30-37
8. धनपति पाण्डेय, आधुनिक भारत का इतिहास, 2017, पृ०- 42-49
9. टेलर आई०- द ओरिजिन ऑफ द आर्यसज, पृ०- 25-29
10. डॉ० राधा कुमुद मुखर्जी, हिन्दु सिविलाईजेशन, 1998, पृ- 84-87
11. जी०टी० गैरेट, द लिगेसी ऑफ इण्डिया, 2004, पृ०-2-17
12. डॉ० ओमप्रकाश : प्राचीन भारत का इतिहास, पृ०– 17–18